अब्दुल वाहिद खान उर्फ वाहिद और अन्य

बनाम

आंध्र प्रदेश राज्य

27 अगस्त, 2002

(रूमा पाल और अरिजीत पासायत, न्यायाधिपतिगण)

दंड संहिता 1860-धारा 302, 300 व 299-धारा 302 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्वि - वैधानिकता - लूटने के उद्वेश्य से अभियुक्तगण ने एक व्यक्तिपर चाकू से अंधाधुंध वार किया जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु - विचारणन्यायालय ने अभियुक्त को हत्या की श्रेणी में नहीं आने वाले आपराधिक मानववध के लिए दोषसिद्व किया - उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्वि को परिवर्तित कर हत्या के लिए दोषसिद्व किया- प्रस्तुत अपील में यह अभिनिधार्रित किया गया कि हमले के समय का आशय सुसंगत प्रावधानों की प्रयोज्यता निधार्रित करता है - प्रस्तुत मामले में मृत्यु शारीरिक क्षति या शारीरिक क्षतियों जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त थी, के कारण कारित हुई - अतः उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्त की दोषसिद्वि को हत्या में परिवर्तित करना न्यायसंगत है। हत्या व हत्या की श्रेणी में नहीं आने वाले आपराधिक

मानववध-के मध्य विभेद- चर्चा

कार्यवाही शिनाख्तगी- अभियुक्त की गिरफ्तारी के तुरन्त बाद आयोजित किया जाना चाहिए-यधपि कार्यवाही शिनाख्तगी के आयोजन में कुछ विलम्ब जो नियंत्रण से परे है, अभियोजन मामले के लिए घातक नहीं।

अपीलार्थी अभियुक्तगण ने एच को लूटने का षडयंत्र रचा। तीनों अभियुक्तगण ने एच पर चाकुओं से अंधाधुंध वार किए जिसके परिणामस्वरूप उसकी मृत्यु कारित। विचारण न्यायालय द्वारा चश्मदीद साक्षीगण की साक्ष्य के आधार पर तीनों अभियुक्तगण को धारा 304 भाग । सपठित धारा 34 भां.दं.सं. के तहत दोषसिद्व किया तथा अन्य को दोषमुक्त किया। उच्च न्यायालय ने दोषसिद्वि व दण्डादेश को धारा 302 भा.दं.सं. में परिवर्तित किया तथा अभियुक्तगण की दोषमुक्ति को यथावत रखा। अतः प्रस्तुत अपीलें।

अपीलार्थी की और से यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि कार्यवाही शिनाख्तगी आयोजित किए जाने में विलम्ब अभियोजन के लिए घातक; यह कि उच्च न्यायलय ने दोषसिद्वि को परिवर्तित नहीं करना चाहा था तथा वह चिकित्सक जिसने पोस्टमार्टम किया, के अनुसार चोटें खुदरी सतह पर गिरने से कारित हुईं अतः यह निष्कर्ष संभव नहीं कि अभियुक्तगण का

आशय मृतक से नगदी लूटने हेतु मारने का था।

प्रत्यर्थी द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि कार्यवाही शिनाख्तगी आयोजित किए जाने से पूर्व सभी औपचारिकताओं की पालना की गई तथा कार्यवाही शिनाख्तगी आयोजित किए जाने में कुछ देरी हुई जिसे अभियोजन द्वारा युक्तियुक्त रूप से स्पष्ट किया गया तथा मृतक को लूटने के वांछित उद्वेश्य की प्राप्ति हेतु अभियुक्तगण ने मृतक पर चाकू से अंधाधुंध वार जब तक वर मर नहीं गया, तब तक किए तथा नगदी व ड्रॉफ्ट छीन लिए गए, अतः उच्च न्यायालय द्वारा धारा 302 भा.दं.सं. लागू करना न्यायोचित।

अपीलों को खारिज करते हुए न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया:

1.1. हत्या व आपराधिक मानववध के मध्य शैक्षिणक अन्तर करने में न्यायालयों को कठिनाई का सामना करना पड़ा है। यह भ्रान्ति उत्पन्न होती है यदि न्यायालय विधायिका द्वारा इन धाराओं में प्रयुक्त शब्दों के वास्तिवक परिधि व अर्थ से दृष्टि हटा लेती है एवं सूक्ष्म कल्पनाओं में समाविष्ट हो जाती है।

1.2. धारा 299 खण्ड (ख) भा.दं.सं. धारा 300 खण्ड (2) एवं (3) भा.दं.सं. के समान है। खण्ड (2) के तहत आवश्यक आपराधिक मनोस्थिति की विशिष्ट विशेषता अपराधी द्वारा रखे जाने वाली यह जानकारी है कि की पीड़ित विशेष ऐसी विशेष स्थिति अथवा स्वास्थ्य की स्थिति में है कि उसे

अंदरूनी क्षति कारित करना घातक हो सकता है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी क्षति सामान्य स्वास्थ्य या स्थिति वाले व्यक्ति के लिए प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त नहीं है। मृत्यु कारित करने का आशय खण्ड (2) का आवश्यक तत्व नहीं है। शारीरिक क्षति कारित करने के आशय के साथ अपराधी की ऐसी क्षति से विशिष्ट पीड़ित की मृत्यु कारित होने की संभावना की जानकारी मृत्यु को इस खण्ड की परिधि में लाने हेतु पयार्प्त।

1.3. धारा 299 खण्ड (ख) अपराधी के भाग पर ऐसी जानकारी की अवधारणा नहीं करता। धारा 300 खण्ड (2) भा.दं.सं. के अन्तर्गत आने वाले मामले का उदाहरण यह हो सकता है कि जहां हमलावर साशय मुष्टि प्रहार का कृत्य कारित करता है, यह जानते हुए कि पीड़ित बढ़े हुए यकृत या बढ़े हुए स्पीलन या हृदय रोग से पीड़त है तथा ऐसे मुट्ठी प्रहार से ऐसे व्यक्ति की लीवर फटने, स्पलीन फटने या हृदयघात के परिणामस्वरूप मृत्यु कारित होना संभाव्य है। यदि हमलावर को शारीरिक दुर्बलता के विषय में कोई जानकारी नहीं है ना ही उसका आशय मृत्यु या शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है, कारित करने का है, अपराध हत्या नहीं माना जावेगा। यधपि वह चोट जिसके कारण मृत्यु हुई है आशय पूर्व कारित की गई थी। धारा 300 के खण्ड (3) भा.दं.सं. में शब्द 'मृत्यु कारित होना संभाव्य के स्थान पर समरूपी धारा

299 खण्ड (ख) में शब्द 'प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में पर्याप्त का प्रयोग किया गया है। स्पष्टतः यह विभेद शारीरिक क्षति जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है तथा शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पयार्प्त है, के मध्य विद्यमान है। यह विभेद महीन है परन्तु वास्तविक है एवं यदि नजरअंदाज किया गया, तो न्याय का हनन होगा। धारा 299 खण्ड (ख) भा.दं.सं. व धारा 300 खण्ड (3) भा.दं.सं. के मध्य का अन्तर साशय कारित शारीरिक क्षति के परिणामस्वरूप होने वाली मृत्यु की संभावना की डिग्री का है। मृत्यु की संभावना की डिग्री यह निधार्रित करती है कि आपराधिक मानववध गंभीरतम, मध्यम या न्यूनतम डिग्री का है। धारा 299 खण्ड (ख) में 'संभाव्य शब्द मात्र संभावना से भिन्न संभाव्यता के भाव को दर्शाता है। शब्द 'शारीरिक क्षति.....प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त' का तार्त्पय यह है कि प्रकृति के सामान्य अनुक्रम के दृष्टिगत शारीरिक क्षति के परिणामस्वरूप मृत्यु की अत्यधिक संभावना है।

1.4. खण्ड (3) की परिधि में आने वाले मामलों के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी का आशय मृत्यु कारित करने का हो, जब तक साशय कारित शारीरिक क्षति या क्षतियों जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है, के परिणामस्वरूप मृत्यु कारित हुई है।

1.5. धारा 299 खण्ड (ग) भा.दं.सं. व धारा 300 खण्ड (4) भा.दं.सं. के लिए मृत्यु कारित करने वाले कृत्य की संभावना की जानकारी होना आवश्यक है। इस प्रकरण के उद्वेश्य हेतु इन समरूपी खण्ड़ों के विभेद को अधिक विस्तारित करना आवश्यक नहीं है। यह कहना पर्याप्त होगा कि धारा 300 खण्ड (4) भा.दं.सं. वहां लागू होगा जहां अपराधी को सामान्यतः व्यक्त या व्यक्तियों से भिन्न व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों विशेष की मृत्यु की संभाव्यता के विषय की जानकारी हो जो कि ऐसा आसनसंकट कृत्य जो व्यवहारिक निश्चितता के समीप हो से कारित हुई है। अपराधी की ऐसी जानकारी संभाव्यता की अधिकतम डिग्री की होनी चाहिए, कि अपराधी द्वारा किया गया कृत्य अपराधी के द्वारा मृत्यु कारित करने या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने के जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना किया है। उपरोक्त वर्णित बिन्दु मात्र व्यापक दिशा निर्देश है जो कठोरता पूर्वक अनिवार्य नहीं है। अधिकतर मामलों में इनकी पालना न्यायालय के कार्य में सहायक होगी परन्तु कुछ मामलों में तथ्य इतने उलझे हुए होते है एवं द्वितीय व तृतीय प्रक्रम के मामले एक दूसरे के समाहित होते है। दूसरे व तीसरे प्रक्रम से संबंधित मामलों को पृथक से देखा जाना सुविधाजनक नहीं होगा।

1.6. प्रस्तुत मामले मे गवाहों की साक्ष्य यह थी कि तीनों अपीलार्थीगण ने मृतक पर चाकू से अंधाधुंध वार किए यधपि उनका उद्वेश्य

उसे लूटना था। जैसा कि चश्मदीद साक्षीगण की साक्ष्य से स्थापित होता है कि अभियुक्तगण को प्रतिरोध की अपेक्षा थी तथा तीनों चाकुआें से लैस थे। यह नहीं कहा जा सकता कि वे किसी प्रतिरोध की अपेक्षा नहीं कर रहे हो जबकि वे बड़ी धन राशि लूटने का आशय रखते थे। उनका आशय व उद्वेश्य पैसा प्राप्त करना था। जब मृतक के द्वारा प्रतिरोध करना अपेक्षित था, वे मृतक पर तब तक चाकूओं से वार करते गए, जब तक उसकी जिंदगी समाप्त नहीं हो गई तथा उसके बाद नगदी ड्रॉफ्ट छीन लिए गए। हमले के समय प्रचलित उद्वेश्य यह निर्धारित करता है कि कौनसा सुसंगत प्रावधान लागू होगा। विचारण न्यायालय द्वारा जिस कारण को महत्व दिया गया है जिसका अवलम्बन लेते हुए धारा 304 भाग 1 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्वि की गई है, वह यह निष्कर्ष है कि दो चोटें जो अभियोजन साक्षी चिकित्सक के द्वारा मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त बतायी गयी है, वे चोटें गिरने से आना संभव है। पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि चिकित्सक के द्वारा कई चोटों को मृत्यु का कारण बताया गया तथा विचारण न्यायालय द्वारा जिन दो चोटों पर गौर किया गया, वे उन चोटों में से थी। चाकू की चोटें भी उनमें से एक थी। चाकू के कुल 06 घाव थे। चिकित्सक के द्वारा यह कथन किया गया है कि चाकू की चोटें व अन्य चोटें तथा अंदरूनी चोटें प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त थी। विचारण न्यायालय द्वारा चिकित्सक के इस कथन कि मृत्यु

का कारण चाकू की चोटों के साथ सिर की चोट भी हो सकती है, को अधिक महत्व दिया गया। इस बिन्दु पर गौर नहीं किया गया कि चिकित्सक ने यह स्पष्ट किया कि चाकू की चोटें तथा सिर की चाट पृथक-पृथक रूप से मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है। पहले चाकू के घाव कारित हुए उसके पश्चात संभवतया गिरने की चोट आई। अतः संपूर्ण परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए उच्च न्यायालय द्वारा धारा 302 भा.दं.सं. के तहत की गई दोषसिद्वि में त्रुटि प्रकट नहीं होती है।

न्यायिक दृष्टांत राजवन्त और अन्य बनाम केरल राज्य, ए आई आर (1966) एस सी 1874; विरसासिंह बनाम पंजाब राज्य, ए.आई.आर. (1958) एस सी 465 और आंध्रप्रदेश बनाम रायवरयु पुन्नरया, (1976) 4 एस सी सी 382 का अवलम्बन लिया।

2. शिनाख्तगी कार्यवाही कराए जाने की आवश्यकता तब उत्पन्न होती है जब अभियुक्त गवाहों के पूर्व परिचित ना हो। कार्यवाही शिनाख्तगी कराए जाने का मुख्य उद्वेश्य अनुसंधान के दौरान गवाहों की याददाश्त का परीक्षण करना है जो कि यह दावा करते हैं कि उन्होंने अपराधी को घटना के समय देखा है तथा वे उसे अन्य व्यक्तियों के मध्य बिना किसी सहायता व सोत्र के प्रथम प्रभाव के आधार पर पहचान सकते है। साथ ही अभियोजन पक्ष यह सुनिश्चित कर सकता है कि इनमें से सभी या किन्हीं

व्यक्तियों को अपराध के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी के रूप में सूचीबद्व किया जाये। कार्यवाही शिनाख्तगी की प्रकृति सच्चाई को जांचने के परीक्षा की है यह आवश्यक है कि कार्यवाही शिनाख्तगी अभियुक्त की गिरफतारी के तुरन्त पश्चात करवायी जाये। कार्यवाही शिनाख्तगी से पूर्व अभियुक्त को गवाहों को दिखा दिए जाने की संभावना को रदद करने हेतु यह आवश्यक हो जाता है। यदि ऐसी परिस्थितयां जो नियंत्रण से परे है के कारण कुछ विलम्ब हो जाता है, तो ऐसे विलम्ब को अभियोजन के लिए घातक नहीं कहा जा सकता। प्रस्तुत मामले में अभियुक्त की गिरफतारी के तुरन्त पश्चात कार्यवाही शिनाख्तगी कराए जाने के सभी संपूर्ण प्रयास किए गए। प्रथम कार्यवाही शिनाख्तगी के समय अभियोजन साक्षी उपलब्ध नहीं था तथा पुलिस के निवेदन पर दूसरी कार्यवाही आयोजित की गई। मात्र इस आधार पर कि दूसरी कार्यवाही शिनाख्तगी करवायी गयी है, परिस्थितियों को संदेहास्पद नहीं माना जा सकता।

मटरू @ गिरिश चन्द्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य, ए आई आर (1971) एस सी 1050 और संतोख सिंह बनाम इजहार हुसैन और अन्य ए आई आर (1973) एस सी 2190 अवलम्बन लिया गया।

दांडिक अपील क्षेत्राधिकारः दांडिक अपील संख्याः 917-920/2000

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा दांडिक अपील संख्या 717/96,

916/96, 660/96 व 1011/96 में पारित निर्णय व आदेश दिनांक 22.01.2000 से

नरोत्तम व्यास, एस.एन.तिवारी व बी.डी. शर्मा, अपीलार्थी की ओर से।

सुश्री टी अनामिका और जी. प्रभाकर, प्रत्यर्थी की ओर से।

न्यायालय का निर्णय अरिजीत पासायत, न्यायाधिपति द्वारा सुनाया गया।

आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय के समक्ष अपीलार्थी- अभियुक्तगण द्वारा प्रस्तुत तीन अपीलों व राज्य सरकार द्वारा प्रस्तुत एक अपील का निस्तारण आंध्र प्रदेश की खण्ड पीठ के द्वारा एक ही निर्णय से किया गया। जिसके संदर्भ में ये चार अपीलें प्रस्तुत की गई। अपीलार्थी-अभियुक्तगण द्वारा दोषसिद्वि अन्तर्गत धारा 304 भाग 1 सपठित धारा 34 भारतीय दंड संहिता, 1860 (जिसे संक्षेप में भा.दं.सं. से संबोधित किया जावेगा) को चुनौती दी गयी। राज्य की ओर से यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि अपीलार्थी-अभियुक्तगण को धारा 302 सपठित धारा 34 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्व किया जाना चाहिए था तथा दोनों अभियुक्तगण जिन्हें विचारण न्यायालय द्वारा दोषमुक्त किया गया है, को भी दोषसिद्व किया जाना चाहिए था। अपीलार्थी-अभियुक्तगण की ओर से प्रस्तुत अपीलें खारिज कर दी गई तथा राज्य की ओर से प्रस्तुत अपील आंशिक रूप से स्वीकार कर दण्डादेश को

धारा 302 भा.दं.सं. में परिवर्तित किया गया।

अभियोजन पक्ष की ओर से विचारण के दौरान प्रस्तुत तथ्य संक्षेप में इस प्रकार है किः-

अभियुक्त संख्या 4 बाबू जानी @ माजिद खान @ माजिद, हाजी मोहम्मद याकूब का पूर्व कर्मचारी था। याकूब (जिसे ´मृतक' संबोधित किया जावेगा) जिसकी पांच कपड़े की थोक की दुकानें थी जिन्हें वह अपने पुत्रों व पोत्रों के साथ चला रहा था। अभियुक्त बाबू जानी ने शहर के दर्ज अपराधी अब्दुल वहीद खान @ वहीद (अभियुक्त संख्या 1) मोहम्मद हनीफ @ हनीफ (अभियुक्त संख्या 2) व मोहम्मद खदीर @ खदीर (अभियुक्त संख्या 3) के साथ हाथ मिलाया। उपरोक्त तीनों अभियुक्तगण ने एक मित्र अलीम (अभियुक्त संख्या 5) के साथ मिलकर एक योजना बनायी जिसका उद्वेश्य मृतक को लूटना व आवश्यकता पड़ने पर उसे मारना था। अभियुक्त बाबू जानी को यह जानकारी थी कि मृतक दुकान में हुई बिक्री के पैसे जो कुल एक लाख रूपये से अधिक होते है, को लेकर लगभग आठ बजे घर जाता है। इसी षड़यंत्र के अग्रसरण में अभियुक्त बाबू जानी अभियुक्त संख्या 1, 2 व 3 को दिनांक 19.02.1993 व 20.02.1993 को शाम 7-7.30 पी.एम. पर मृतक को दिखाने तथा उसकी स्थायी प्रकृति की दिनचर्या से परिचित कराने अपने साथ ले गया। दिनांक 22.02.1993 को प्रथम प्रयास किया गया

परन्तु मौके पर अत्यधिक व्यक्तियों की उपस्थिति के कारण वांछित उद्वेश्य की पूर्ति नहीं हो सकी। अगले दिन दिनांक 23.02.1993 को दुर्घटना के दिन शाम को लगभग 7.30 पी.एम. पर अभियुक्त बाबू जानी से सूचना प्राप्त होने पर अभियुक्त संख्या 1 लगायत 3 ने मृतक के घर के बाहर एक चोरी किए हुए चेतक स्कूटर पर चाकू लेकर इंतजार किया। अभियुक्त संख्या 2 के हाथ में एक प्लास्टिक का डिब्बा था जिसमें मिर्ची का पानी था। लगभग 7.45 पी.एम. पर मृतक एम्बेसडर कार जिसे मोहम्मद ताहीर पी.डब्ल्यू. 2 चला रहा था, से अपने घर के नजदीक आया। मृतक के पास लगभग 2.32 लाख रूपये नगद व 1,60,000/-रूपये का डिमाण्ड ड्रॉफ्ट था जो कपड़े के थैले में रखे थे। जब वाहन चालक ने कार के पीछे का दाहिनी तरफ का दरवाजा खोला और बांयी साईड के आगे के दरवाजा से टिफिन लेने गया, तो अभियुक्त संख्या 1 लगायत 3 स्कूटर को चलता हुआ रखकर मृतक हाजी मोहम्मद याकूब की ओर भागे तथा उस पर तीनों ने चाकूओं से अंधाधुंध वार करना प्रारम्भ कर दिया। इसी बीच अभियुक्त सख्या 2 ने बैग जिसमें नगदी व डिमाण्ड ड्रॉफ्ट थे, को छीनने का प्रयास किया। मौके पर स्ट्रीट लाइट थी तथा कार के अंदर की रोशनी भी थी। जब पी.डब्ल्यू 2 मृतक को बचाने आया, तो अभियुक्त संख्या 2 ने मिर्ची का पानी उसके चेहरे पर फैक दिया। वह मदद के लिए चिल्लाया। तीनों अभियुक्तगण द्वारा चाकू से तब तक वार किया गया, जब तक कि मृतक गिर नहीं गया। अभियुक्त संख्या 2

ने नगदी का बैग मृतक के हाथ से छीन लिया तथा तीनों अभियुक्तगण उनके स्कूटर पर भाग गए। यधपि पी.डब्ल्यू 2 व एक समद खान पी.डब्ल्यू 4 ने अभियुक्तगण का कुछ दूरी तक पीछा किया परन्तु वे भागने में सफल हो गये। कई अन्य व्यक्तियों जिसमें मोहम्मद इदरीस अली खान, मोहम्मद अब्दुल बारी (पी.डब्ल्यू 3) शामिल था, ने मृतक के नजदीक आने का प्रयास किया पर वह मर चुका था। तीनों अभियुक्तगण संख्या 1 लगायत 3 अभियुक्त अलीम के बोडा बांद्रा स्थित घर पर पहुॅचे, जहां अभिुक्त बाबू जानी उनका इंतजार कर रहा था। अलीम ने अभियुक्त संख्या 1 लगायत 4 को अपने घर में सश्रय दिया। जहां उन्होंने लूट के पैसों का बंटवारा किया तथा डिमाण्ड ड्रॉफ्ट को नष्ट कर दिया। सूचना प्राप्त होने पर पुलिस मौके पर पहुॅची तथा मोहम्मद इकबाल पी.डब्ल्यू 1 द्वारा एफ. आई. आर. दर्ज करवायी गयी। अनुसंधान किया गया तथा अनुसंधान के पूर्ण होने पर अभियोग पत्र प्रस्तुत किया गया।

प्रथम तीन अभियुक्तगण पर धारा 302 सपठित धारा 34 भा.दं.सं. व धारा 392 सपठित धारा 34 तथा धारा 25 (1-बी) आयुध अधिनियम 1959 का आरोप लगाया गया। प्रथम चार अभियुक्तगण के विरूद्व धारा 302 सपठित धारा 120-बी (1) भा.दं.सं., धारा 392 सपठित 120-बी (1) भा.दं.स. के तहत दंडनीय अपराध का आरोप लगाया गया। अभियुक्त संख्या 5 के विरूद्व धारा 302 सपठित धारा 212 भा.दं.सं. व धारा 411 भा.दं.सं.का

आरोप लगाया गया। अभियुक्तगण ने निर्दोष होने का कथन किया।

अभियोजन पक्ष की ओर से मामले को प्रमाणित करने हेतु 33 गवाहान को परीक्षित करवाया गया। विचारण न्यायालय ने चक्षुदर्शी साक्षीगण की साक्ष्य को विश्वसनीय माना तथा अभियुक्त संख्या 1 लगायत 3 को दोषी ठहराया। यधपि यह निष्कर्ष दिया गया कि अभियुक्त संख्या 1 लगायत 3 को धारा 304 भाग 1 भा.दं.सं. व धारा 392 सपठित धारा 34 भा.दं.स. के तहत दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्व किया गया है। अभियुक्तगण को प्रथम बार दस वर्ष व द्वितीय बार सात वर्ष के सश्रम कारावास के दंड से दंडित किया गया। दोनों सजायें साथ-साथ चलने के निर्देश दिए गए। अभियुक्तगण के द्वारा दोषसिद्वि व दण्डादेश के विरूद्व उच्च न्यायालय में अपील प्रस्तुत की गई। राज्य सरकार की ओर से लघुतर अपराध के लिए दोषसिद्व घोषित किए जाने के विरूद्व एवं दो अभियुक्तगण की दोषमुक्ति के विरूद्व अपील प्रस्तुत की गई। जैसा कि ऊपर वर्णित किया गया है कि उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तगण को धारा 304 भाग 1 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्व नहीं किया जाकर धारा 302 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्व घोषित किया। राज्य सरकार की अपील उपरोक्तानुसार स्वीकार की गई लेकिन अन्य अभियुक्तगण की दोषमुक्ति को यथावत रखा गया। उच्च न्यायालय का निर्णय इस अपील में चुनौती की विषय वस्तु है।

विद्वान अधिवक्ता अपीलार्थी की ओर से यह तर्क प्रस्तुत किया कि साक्ष्य जिस पर विचारण न्यायालय ने निर्णय आधारित किया है, विश्वसनीय नहीं है। अभियुक्तगण की शिनाख्तगी कार्यवाही, उनकी गिरफ्तारी के बाद करवायी गयी। वाहन चालक पी.डब्ल्यू 2 ने प्रथम शिनाख्तगी कार्यवाही में भाग नहीं लिया एवं एक महीने के पश्चात जब दूसरी शिनाख्तगी कार्यवाही करवायी गयी तब पी.डबल्यू 2 ने कार्यवाही में भाग लिया तथा अभियुक्तगण की शिनाख्त की। विद्वान अभिभाषक के अनुसार शिनाख्तगी कार्यवाही में हुआ विलम्ब अभियोजन मामले के लिए घातक है। अंततः यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि परिस्थितियों के दृष्टिगत विचारण न्यायालय द्वारा सही निष्कर्ष दिया गया कि अभियुक्तगण को धारा 304 भाग 1 भा.दं.सं. के तहत दोषसिद्व किया जाय ना कि धारा 302 भा.दं.स. के तहत। उच्च न्यायालय को दोषसिद्वि को परिवर्तित नहीं करना चाहिए था। विद्वान अभिभाषक की ओर से यह भी तर्क प्रस्तुत किया गया कि चिकित्सक पी.डब्ल्यू 8 जिसके द्वारा पोस्टमार्टम (शव परीक्षण) किया गया, ने यह पाया कि प्रदर्श पी. 5 की चोट संख्या 10 मृतक के ललाट के बांयी ओर अब्रेशन (घर्षण) है तथा यह खुरदरे धरातल पर गिरने से आना संभव है। इसी प्रकार अंदरूनी चोट संख्या 2 बाहरी चोट संख्या 10 से संबंधित है। इसके आधार पर विचारण न्यायालय द्वारा यह निष्कर्ष दिया गया कि यह उपधारणा किया जाना संभव नहीं है कि अभियुक्त संख्या 1 लगायत 3 का

आशय मृतक से नगदी लूटने के लिए मृतक को मारने का रहा हो।

राज्य की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ता का यह तर्क रहा है कि विचारण न्यायालय द्वारा इस बिन्दु को विस्तार पूर्वक निस्तारित किया है कि कार्यवाही शिनाख्तगी में विलम्ब किस कारण हुआ। यह उल्लेखनीय है कि अभियुक्तगण घटना के दो माह पश्चात गिरफ्तार किए गए थे, उन्हें पुलिस अभिरक्षा में रखा गया एवं उसके पश्चात न्यायिक अभिरक्षा में भेजा गया। अभियुक्तगण की गिरफ्तारी के तुरन्त पश्चात कार्यवाही शिनाख्तगी कराए जाने हेतु संबंधित न्यायालय के समक्ष कार्यवाही की गयी तथा शिनाख्तगी कार्यवाही की न्यायालय ने जो दिनांक निर्धारित की, उसी दिनांक को कार्यवाही शिनाख्तगी करवायी गयी। प्रथम तारीख को पी.डब्ल्यू 2 उपलब्ध नहीं था अतः दूसरी कार्यवाही शिनाख्तगी करवायी गयी। उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी अभियुक्तगण का यह तर्क तात्विक नहीं माना कि गवाहान ने अभियुक्तगण को इसलिए पहचाना हो कि अभियुक्तगण कार्यवाही शिनाख्तगी से पूर्व से जेल में हो। यह उल्लेखनीय है कि संबंधित मैट्रोपॉलिटन मजिस्ट्रेट जिसके द्वारा कार्यवाही शिनाख्तगी करवायी गयी, की साक्ष्य से यह स्पष्ट है कि कार्यवाही शिनाख्तगी से पूर्व सभी औपचारिकता पूर्ण की गई थी। यह भी अभिनिर्धारित किया गया कि विलम्ब का कारण युक्तियुक्त रूप से स्पष्ट किया गया है।

जहां तक धारा 302 भा.दं.सं. के लागू होने का प्रश्न है, यह तर्क प्रस्तुत किया गया कि यधपि आशय मृतक को लूटने का था, जब मृतक ने विरोध किया, तब वांछित उद्वेश्य की पूर्ति हेतु उस पर चाकू से अंधाधुंध वार तब तक किए गए जब तक कि उसकी मृत्यु नहीं हो गई तथा नगदी व डिमाण्ड ड्रॉफ्ट छीन ले गये। उच्च न्यायालय का धारा 302 भा.दं.सं. लागू होने का निष्कर्ष न्यायोचित है।

विचारण न्यायालय द्वारा जिन चोटों पर प्रकाश डाला गया है उन चोटों पर विचार करके ही उच्च न्यायालय ने विचारण न्यायालय के दृष्टिकोण को गलत माना। दोनों के परस्पर निष्कर्ष पर ध्यानपूर्वक विचार किया जाना आवश्यक है।

इस न्यायालय द्वारा मटरू @ गिरीश चन्द्र बनाम उत्तर प्रदेश राज्य ए.आई.आर. (1971) एस सी 1050 में यह निष्कर्ष दिया गया कि शिनाख्तगी कार्यवाही मौलिक साक्ष्य नहीं है। शिनाख्तगी कार्यवाही का मूल उद्वेश्य अनुसंधान एजेन्सी का इस आश्वासन के साथ कि उनकी अपराध के अनुसंधान में प्रगति सही दिशा में हो रही, सहायता करने का है। शिनाख्तगी को न्यायालय में बयान की पुष्टिकारक साक्ष्य के रूप में प्रयोग किया जा सकता है। (देखे संतोख सिंह बनाम इजहार हुसैन व अन्य ए.आई.आर. (1973) एस सी 2190)। कार्यवाही शिनाख्तगी करवाने की

आवश्यकता तब उत्पन्न होती है, जब अभियुक्तगण गवाहान से पूर्व परिचित नहीं होते। कार्यवाही शिनाख्तगी का पूरा विचार यह है कि वे गवाह जो यह दावा करते है कि उन्होंने घटना के समय अपराधी को देखा है, के द्वारा अन्य कई व्यक्तियों में से उस व्यक्ति की बिना किसी की सहायता के या अन्य स्रोत्र के, पहचान किया जावे। यह परीक्षण उनकी सत्यता को जांचने के लिए किया जाता है। अन्य शब्दों में अनुसंधान के प्रक्रम पर कार्यवाही शिनाख्तगी करवाए जाने का मुख्य उद्वेश्य गवाह की प्रथम प्रभाव पर आधारित याददाश्त को जांचने व अभियोजन को यह निर्धारित करने का अवसर प्रदान करना कि उन सभी या उनमें से किन्हीं को अपराध के चश्मदीद साक्षी के रूप में सूचीबद्व किया जाये। कार्यवाही शिनाख्तगी की प्रकृति परीक्षा की है। यह उल्लेखनीय है कि दंड प्रक्रिया संहिता 1973 (संक्षेप में संहिता) भारतीय साक्ष्य अधिनियम 1872(साक्ष्य अधिनियम) में इसके लिए कोई प्रावधान नहीं है। यह वांछित है कि कार्यवाही शिनाख्तगी अभियुक्त की गिरफ्तारी के तुरन्त बाद करवायी जावे। यह अभियुक्त को कार्यवाही शिनाख्तगी से पूर्व गवाहान को दिखा देने की संभावना से रद्व करने हेतु आवश्यक है। यह अभियुक्त की संभाव्य प्रार्थना होती है इसलिए अभियोजन को सावधानीपूर्वक यह सुनिश्चित करना होता है कि ऐसा कोई आक्षेप नहीं लगाया जाये, यदि परिस्थितियां नियंत्रण से बाहर है एवं इस कारण कुछ विलम्ब कारित होता है, तो यह नहीं कहा जा सकता कि वह

अभियोजन के लिए घातक होगा। प्रस्तुत प्रकरण में विचारण न्यायालय द्वारा जिस तथ्यात्मक परिदृश्य पर विचार किया गया है वह यह प्रकट करता है कि अभियुक्तगण की गिरफ्तारी के तुरन्त पश्चात शिनाख्तगी कार्यवाही कराए जाने के संपूर्ण प्रयास किए गए। अभियुक्तगण दिनांक 25.05.1993 को गिरफ्तार हुए। वे दिनांक 09.06.1993 से पुलिस अभिरक्षा में थे। दिनांक 16.06.1993 को मजिस्ट्रेट के समक्ष कार्यवाही शिनाख्तगी कराए जाने की प्रार्थना की गई तथा प्रथम कार्यवाही दिनांक 26.06.1993 को मजिस्ट्रेट द्वारा निर्धारित की गई। पी.डब्ल्यू 2 उपलब्ध नहीं होने के कारण पुलिस के निवेदन पर द्वितीय कार्यवाही शिनाख्तगी करवायी गयी। मात्र द्वितीय शिनाख्तगी कार्यवाही कराया जाना परिस्थितियों पर संदेह उत्पन्न नहीं करता क्योंकि अभियोजन द्वारा द्वितीय कार्यवाही शिनाख्तगी की आवश्यकता को स्पष्ट किया गया है।

चश्मदीद साक्षीगण की विश्वसनीयता व ठोस साक्ष्य के दृष्टिगत गवाहान के कथनों में दुर्बलता का तर्क तात्विक प्रतीत नहीं होता है। अपीलार्थीगण को अपराध का रचियता माना जा चुका है। विचारण न्यायालय द्वारा चक्षुदर्शी साक्षीगण की साक्ष्य को विस्तृत रूप से विवेचित किया गया है। गवाहों के द्वारा अपराध का विस्तार से विवरण दिया गया है। तीश्रण प्रतिपरीक्षण से भी उनके कथनों की सत्यता पर कोई संदेह नहीं हो सका है। उच्च न्यायालय ने अपील में साक्ष्य की ग्राह्यता के बिन्दु पर

विचार करके यह पाया कि साक्ष्य त्रुटिरहित है।

अब हमारे समक्ष यह महत्वपूर्ण प्रश्न है कि प्रयोज्त होने वाला सुसंगत प्रावधान कौनसा है। भा.दं.सं. की योजना में आपराधिक मानव वध एक जाति है तथा 'हत्या उसकी प्रजाति है। सभी 'हत्या आपराधिक मानववध हैं परन्तु इसके विपरीत सभी 'आपराधिक मानववध' 'हत्या नहीं है। सामान्यतः 'आपराधिक मानववध' बिना 'हत्या के विशेष लक्षणों के 'हत्या की श्रेणी में नही आने वाला 'मानववध' है। जेनेरिक अपराध की गंभीरता के अनुपात में दंड की मात्रा निर्धारित करने हेतु भा.दं.सं. व्यवहारिक रूप से 'आपराधिक मानववध' की तीन डिग्रियों को मान्यता देता है। प्रथम जिसे आपराधिक मानववध की प्रथम डिग्री कहा जा सकता है। यह आपराधिक मानववध में गंभीरतम प्रकार है जिसे धारा 300 में 'हत्या के रूप में परिभाषित किया गया है। द्वितीय डिग्री को आपराधिक मानववध की दूसरी डिग्री कहा गया है। यह धारा 304 भाग 1 के तहत दंडनीय है इसके पश्चात आपराधिक मानववध की तीसरी डिग्री है जो कि सबसे न्यूनतम प्रकार का आपराधिक मानववध है एवं इसके लिए तीनों डिग्रियों में सबसे कम दंड का प्रावधान किया गया है। इस डिग्री के आपराधिक मानववध धारा 304 के द्वितीय भाग के तहत दंडनीय है।

न्यायालयों के समक्ष 'हत्या व 'आपराधिक मानववध' में शैक्षिणक

विभेद करने में सदैव समस्यायें उत्पन्न हुयी है। यह विभ्रान्ति तब उत्पन्न होती है जब न्यायालयों की विधायिका द्वारा इन धाराओं में प्रयुक्त शब्दों के सही परिधि व अर्थ से दृष्टि हट जाती है एवं सूक्ष्म कल्पनाओं में समाविष्ट हो जाते है। इन प्रावधानों के निर्वचन एवं प्रयोज्यता के संदर्भ में सबसे सुरक्षित तरीका धारा 299 भा.दं.सं. व धारा 300 भा.दं.सं. के विभिन्न खण्ड में प्रयुक्त मूल शब्दों पर दृष्टि केन्द्रित रखना प्रतीत होता है। निम्नलिखित तुलनात्मक सारणी दोनों अपराधों में भेद के बिन्दुओं को स्पष्ट करने में सहायक होगी।

धारा 299 भा.दं.सं. धारा 300 भा.दं.सं

एक व्यक्ति आपराधिक मानववध कारित कुछ अपवादों के होते हुए आपराधिक मानव करता है यदि जिस कृत्य के द्वारा मृत्यु वध 'हत्या है यदि जिस कृत्य के द्वारा मृत्युकारित की है, वह कर दिया गया है। कारित की गयी है, वह कर दिया गया है।

आशय

(ए) मृत्यु करने के आशय से अथवा

(1) मृत्यु कारित करने के आशय से अथवा

(बी) ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने के

(2) ऐसी शारीरिक क्षति करने के आशय से जिससे आशय से जिससे मृत्यु कारित हो जाना अपराधी जानता हो कि उस व्यक्ति की मृत्यु संभाव्य हो। करना संभव है जिसे वह अपहानि कारित की गई है अथवा

(3) किसी व्यक्ति को शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से और वह शारीरिक क्षति जिसे कारित करने का आशय हो, प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त हो अथवा जानकारी

(सी) यह ज्ञान रखते हुए कि कृत्य से यह

(4) इस जानकारी के साथ की जिस कृत्य के द्वारा संभाव्य है मृत्यु कारित की गई है, वह इतनी आसनसंकट है कि पूरी अधिसंभाव्यता है कि मृत्यु कारित कर ही देगा या ऐसी क्षति कारित कर ही देगा जिससे मृत्यु कारित होना संभाव्य है और मृत्यु कारित करना या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने की जोखिम उठाने के लिए किसी प्रति हेतु ऐसा कार्य करें।

धारा 299 भा.दं.सं. खण्ड (ख) धारा 300 भा.दं.सं. खण्ड (2) व (3) से मेल खाता है। खण्ड (2) के तहत आवश्यक आपराधिक मनोस्थिति की विशिष्ठ विशेषता अपराधी की पीड़ित विशेष की यह जानकारी रखना है कि उस पीड़ित की ऐसी विशेष स्थिति या स्वास्थ्य की स्थिति है कि उसे कारित अंदरूनी क्षति उसके लिए घातक हो सकती है, इस तथ्य के बावजूद कि ऐसी क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में सामान्य स्वास्थ्य व स्थिति

के व्यक्ति की मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त नहीं होगी। यह उल्लेखनीय है कि मृत्यु कारित करने का आशय खण्ड (2) का आवश्यक तत्व नहीं है। मात्र शारीरिक क्षति कारित करने के आशय के साथ अपराध की जानकारी, कि ऐसी क्षति से पीड़ित विशेष की मृत्यु कारित होना संभाव्य है, ऐसे वध की इस खण्ड की परिधि में लाने हेतु पर्याप्त है। खण्ड (2) का यह पहलू धारा 300 भा.द.स. के साथ दिए गए दृष्टांत (बी) से उत्पन्न होता है।

धारा 299 भा.दं.सं. का खण्ड (बी) अपराधी के भाग पर किसी जानकारी की अभिधारणा नहीं करता। धारा 300 भा.दं.सं. के खण्ड 2 के अन्तर्गत आने वाले मामलों के उदाहरण यह हो सकता है कि जहां अपराधी मुट्ठी के प्रहार से साशय यह जानते हुए कि पीड़ित बढ़े हुए यकृत या स्पीलन की बीमारी से ग्रस्त है या बीमार हृदय से ग्रस्त है और ऐसे आघात से उस व्यक्ति का लीवर फट जाने या स्पीलन हृदय घात के परिणामस्वरूप मृत्यु हो जाना संभाव्य है। यदि हमलावर को रोग या पीड़ित की विशिष्ट शारीरिक दुर्बलता के संबंध में कोई जानकारी नहीं है ना ही उसका मृत्यु या शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त हो, कारित करने का आशय है, अपराध 'हत्या की श्रेणी में नहीं आयेगी। यदि शारीरिक क्षति जिससे मृत्यु कारित की गई, साशय कारित की गई थी। धारा 300 भा.दं.सं. के उपखण्ड (3) में 'मृत्यु' कारित होना संभाव्य' जो कि समरूपी धारा 299 भा.दं.सं. में प्रयुक्त है, के स्थान पर

प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में पर्याप्त का प्रयोग किया गया है। स्पष्टत अंतर शारीरिक क्षति जिससे मृत्यु होना संभाव्य व शारीरिक क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है, के मध्य विद्यमान है। यह विभेद यधपि महीन परन्तु वास्तविक है। इस भेद को नजरअंदाज किए जाने के परिणामस्वरूप न्याय का हनन हो जावेगा। धारा 299 खण्ड (बी) भा.दं.सं. व धारा 300 खण्ड (3) भा.दं.सं. के मध्य का अन्तर साशय कारित शारीरिक क्षति से मृत्यु कारित होने की संभावना की डिग्री का है। यदि व्यापक रूप से देखा जाये, तो यह मृत्यु कारित होने की संभावना की डिग्री है जो यह निर्धारित करती है कि आपराधिक मानववध गंभीरतम, मध्यम या न्यूनतम डिग्री का है। धारा 299 खण्ड (बी) भा.दं.सं. में प्रयुक्त शब्द 'संभाव्य मात्र संभावना से भिन्न संभाव्यता के भाव को दर्शाता है। 'शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने के लिए पर्याप्त है से तात्पर्य यह है कि शारीरिक क्षति के परिणामस्वरूप प्रकृति के सामान्य अनुक्रम के दृष्टिगत मृत्यु अत्यधिक संभाव्य है।

खण्ड (3) के तहत मामला लाने के लिए यह आवश्यक नहीं है कि अपराधी का आशय मृत्यु कारित करने का हो जब तक कि मृत्यु बिना आशय के कारित शारीरिक क्षति या क्षतियों जो सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त हो से मृत्यु कारित हुर् हो। राजवंत व अन्य बनाम केरल राज्य, ए.आई.आर. (1966) एस. सी. 1874 इस बिन्दु पर उचित

न्याय दृष्टांत है।

विरसासिंह बनाम स्टेट ऑफ पंजाब, ए.आई.आर. (1958) एस. सी. 465 के प्रकरण में न्यायालय की ओर से विवियन बॉस न्यायाधिपति ने खण्ड 3 की परिधि को स्पष्ट किया। यह निष्कर्ष दिया गया कि अभियोजन को मामला धारा 300 भा.दं.सं. के 'तीसरा' के अन्तर्गत मामले को लाने हेतु निम्नलिखित तथ्य साबित करने होगेः प्रथम, यह स्थापित करना होगा कि शारीरिक क्षति विद्यमान है; दूसरा शारीरिक क्षति की प्रकृति को प्रमाणित करना होगा। ये विशुद्व उद्वेशित अनुसंधान है। तीसरा, यह प्रमाणित करना आवश्यक है कि विशिष्ट शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था तात्पर्य यह है कि कोई दुर्घटना नहीं हुयी या आशय के बिना अथवा अन्य प्रकार की शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था। यदि उपरोक्त तीनों तत्वों का अस्तित्व साबित हो जाने पर जांच को आगे बढ़ाया जा सकता है। एवं चौथा यह प्रमाणित करना आवश्यक है कि शारीरिक क्षति का प्रकार ऊपर वर्णित तीनों तत्वों को समाविष्ट करती है एवं प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है। जांच में यह भाग पूरी तरह उद्वेशित एवं अनुमानिक है तथा इसका अपराध के आशय से कोई संबंध नहीं है।

धारा 300 भा.दं.सं. खण्ड 'तीसरा' के आवश्यक तत्व विद्वान न्यायाधीश द्वारा उनकी भाषा में निम्नप्रकार बताए गएः

"कि संक्षेप में कहा जाय, तो अभियोजन मामले को धारा 300 भा.द.स. 'तीसरा' में लाने हेतु निम्नलिखित तथ्य साबित करने होगे। प्रथम अभियोजन पक्ष को यह साबित करना होगा कि शारीरिक क्षति मौजूद है।दूसरा शारीरिक क्षति की प्रकृति को प्रमाणित करना होगा। यह पूरी तरह ऑब्जेक्टिव अनुसंधान है।

तीसरा यह साबित करना आवश्यक है कि विशिष्ट शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था एवं यह दुर्घटनात्मक अथवा आशय के बिना अथवा अन्य प्रकार की शारीरिक क्षति का आशय नहीं था। एक बार इन तीनों तत्वों का अस्तित्व प्रमाणित हो जाता है, तो जांच आगे बढ़ायी जा सकती है।

चौथा, यह प्रमाणित किया जाना आवश्यक है कि शारीरिक क्षति की प्रकृति जिसे अभी वर्णित किया गया है कि रचना ऊपर वर्णित तीनों तत्वों से हुई है एवं शारीरिक क्षति प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है। जांच में यह भाग पूर्णतया ऑब्जेक्टिव एवं अनुमानित है तथा इसका अपराधी के आशय से कोई संबंध नहीं है।"

विद्वान न्यायाधीश द्वारा तीसरे तत्व को निम्नलिखित शब्दों से स्पष्ट किया गया है (पृष्ठ 468 पर)

"प्रश्न यह नहीं है कि बंदी का आशय गंभीर शारीरिक क्षति कारित करने का था अथवा मामूली क्षति कारित करने का बल्कि यह है कि उसका आशय शारीरिक क्षति कारित करने का था जिसका विद्यमान होना प्रमाणित हुआ है। यदि वह यह दर्शाता है कि उसके द्वारा नहीं किया गया है या समस्त परिस्थितियां ऐसी अवधारणा को सत्यापित करती है, तो निसंदेह इस धारा का वांछित आशय प्रमाणित नहीं होता है। परन्तु यदि शारीरिक क्षति से परे कुछ नहीं है, तथा यह तथ्य कि अपीलार्थी ने क्षति कारित की है, तो मात्र यह संभावित निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उसका आशय ऐसी शारीरिक क्षति कारित करने का था। अपीलार्थी इसकी गंभीरता या आशायित गंभीर परिणामों को जानते थे, अथवा नहीं महत्वहीन है। जहां तक आशय से संबंध है, प्रश्न यह नहीं है कि उसको मार देने का आशय था या गंभीरता की एक विशिष्ट डिग्री की शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था, या उसका आशय प्रश्नतगत शारीरिक क्षति करने का था, एक बार यदि शारीरिक क्षति का अस्तित्व प्रमाणित हो जाता है, तो शारीरिक क्षति कारित करने के आशय की

उपधारणा की जा सकती है जब तक कि साक्ष्य व परिस्थितियों से विपरीत निष्कर्ष नहीं निकलता हो।''

विवियेन बॉस, न्यायाधिपति के ये निष्कर्ष आप्त निर्णय माने जाते है। विरसासिंह के प्रकरण (उपरोक्त) में खण्ड 'तीसरा' की प्रयोज्यता के विषय में जो परीक्षा प्रतिपादित की गई है, वह अब हमारी विधिक व्यवस्था में समाहित हो गयी है तथा कानून के शासन का भाग बन गयी है। धारा 300 भा.दं.सं. के खण्ड 'तीसरा' के अन्तर्गत आपराधिक मानववध 'हत्या है, यदि निम्नलिखित दोनों शर्तो का समाधान हो जाता है जैसे (a) वह कृत्य जिससे मृत्यु कारित हुई है, मृत्यु कारित करने के आशय से या शारीरिक क्षति कारित करने के आशय से कर दिया गया है, तथा (b) यह कि शारीरिक क्षति जिसे कारित करने का आशय था वह प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है। यह प्रमाणित करना आवश्यक है कि ऐसी विशिष्ट शारीरिक क्षति कारित करने का आशय था जो कि प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त थी। अर्थात जो शारीरिक क्षति विद्यमान पायी गयी, उसी शारीरिक क्षति को कारित करने का आशय था।

अतः विरसा सिंह के मामले में प्रतिपादित सिद्वान्त के अनुसार यदि अभियुक्त का आशय ऐसी शारीरिक क्षति जो प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में

मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त थी, को कारित करने के आशय तक सीमित था एवं उसका आशय मृत्यु कारित करने तक विस्तारित नहीं था, अपराध 'हत्या माना जावेगा। धारा 300 भा.दं.सं. के साथ संलग्न दृष्टांत (ग) इस बिन्दु को स्पष्ट करता है।

धारा 299 भा.दं.सं. का खण्ड (ग) व धारा 300 भा.दं.सं. का खण्ड (4) दोनों हेतु मृत्यु कारित करने के कृत्य की संभावनों की जानकारी होना आवश्यक है। इस प्रकरण के उद्वेश्य हेतु इन समरूपी खण्डों के विभेद को अधिक विस्तारित करना आवश्यक नहीं है। यह कहना पर्याप्त होगा धारा 300 भा.दं.सं. खण्ड (4) लागू होगा, जहां अपराधी को सामान्यतः व्यक्ति या व्यक्तियों से भिन्न व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों विशेष की मृत्यु की संभाव्यता के विषय की जानकारी हो-मृत्यु ऐसे आसनसंकट कृत्य से कारित हुई है जो व्यवहारिक निश्चितता के समीप है। अभियुक्त के भाग पर ऐसी जानकारी उच्चतम डिग्री की संभाव्यता की होनी चाहिए कि अभियुक्त द्वारा मृत्यु कारित करना या पूर्वोक्त रूप की क्षति कारित करने का जोखिम उठाने के लिए किसी प्रतिहेतु के बिना ऐसा कार्य किया गया हो।

ऊपर वर्णित केवल व्यापक दिशा निर्देश है तथा कठोरता से अनिवार्य नहीं है। अधिकतर मामलों में ये निष्कर्ष न्यायालयों के कार्य में सहायक होगे परन्तु किन्हीं मामलों में तथ्य इतने उलझे हुए होते है तथा द्वितीय व

तृतीय प्रक्रम एक दूसरे में मिले हुए होते है। तृतीय श्रेणी के मामले को देखा जाना सुविधाजनक नहीं होगा।

इस स्थिति पर इस न्यायालय द्वारा आंध्रप्रदेश राज्य बनाम रायवरपु पुन्नया (1976) 4 एस. सी. सी. 382 न्याय दृष्टांत में प्रकाश डाला गया है।

हस्तगत मामले में साक्षियों की साक्ष्य यह थी कि तीनों अपीलार्थीगण ने मृतक पर चाकू से अंधाधुंध वार किया यधपि उनका उद्वेश्य मृतक को लूटने का था। जैसा कि चश्मदीद साक्षीगण की साक्ष्य से स्थापित हो चुका है कि अभियुक्तगण ने प्रतिरोध की अपेक्षा की थी तथा तीनों चाकू से लैस थे। यह नहीं कहा जा सकता कि उन्हें किसी प्रतिरोध की उम्मीद नहीं थी जबकि वे एक बड़ी धन राशि लूटना चाहते थे। उनका उद्वेश्य पैसा प्राप्त करना था। जब मृतक के द्वारा प्रतिरोध किया जाना अपेक्षित था, अभियुक्तगण चाकू से तब तक वार करते रहे, जब तक मृतक का जीवन समाप्त नहीं हो गया एवं उसके बाद नगद व डिमाण्ड ड्रॉफ्ट छीन लिये गये। हमले में विद्यमान उद्वेश्य सुसंगत प्रावधानो की प्रयोज्यता को निर्धारित करता है। विचारण न्यायालय के द्वारा जिस बिन्दु धारा 304 भा.दं.सं. भाग (1) में दोषसिद्वि परिवर्तित करने हेतु महत्व व बिना साक्ष्य निष्कर्ष दिया गया वह यह था कि दोनों शारीरिक क्षति जो कि चिकित्सक पी.डब्ल्यू. 8

द्वारा बतायी गयी एवं मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त थी, वे गिरने से आना संभव थी। पोस्टमार्टम रिपोर्ट के अवलोकन से यह प्रकट होता है कि चिकित्सक द्वारा कई चोटों को मृत्यु का कारण बताया गया तथा विचारण न्यायालय द्वारा देखी गयी दो चोटें ही केवल मृत्यु का कारण नहीं थी। वास्तविकता में चोट संख्या 5 चाकू की चोट उनमें से एक थी। चाकू के केवल 6 घाव थे। चिकित्सक ने चोट संख्या 5, 7 व 11 तथा अंदरूनी चोट संख्या 1 व 2 को प्रकृति के सामान्य अनुक्रम में मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त बताया है। विचारण न्यायालय द्वारा पी.डब्ल्यू 8 का बयान कि मृत्यु का कारण चाकू के घाव के साथ-साथ सिर की चोट हो सकती है, को महत्व दिया गया है। जबकि इस बिन्दु पर ध्यान नहीं दिया गया कि चिकित्सक ने निम्नलिखित प्रभाव को स्पष्ट किया है कि चाकू के घाव के साथ ही साथ सिर की चोट पृथक-पृथक रूप से मृत्यु कारित करने हेतु पर्याप्त है। पहले चाकू के घाव कारित हुए इसके पश्चात संभवतः गिरने की चोट आयी। समस्त परिस्थितियों को दृष्टिगत रखते हुए उच्च न्यायालय द्वारा धारा 302 भा.दं.सं. के तहत की गई दोषसिद्वि में कोई त्रुटि नहीं है। प्रस्तुत अपीलें खारिज किए जाने योग्य है।

अपीलें खारिज की जाती है।

यह अनुवाद आर्टिफिशल इंटेलिजेन्स टूल सुवास की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी मीना अग्रवाल (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है। अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए , निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा |